Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

भारतीय संगीत पर लोक साहित्य का प्रभाव

डॉ. शशि बाला
एसोसिएट प्रोफेसर (संगीत–वोकल)
गवर्नमेंट गर्ल्स जॉइंट ग्रेजुएट कॉलेज, हिसार

सारांश
भारतीय संगीत और लोक साहित्य का संबंध अत्यंत गहरा और अविभाज्य है। लोक साहित्य, जो जनजीवन की संवेदनाओं, आस्थाओं और परंपराओं का सजीव प्रतिबिंब है, ने भारतीय संगीत को समृद्ध आधार और सहजता प्रदान की है। श्रम, उत्सव, विवाह, ऋतु और धार्मिक अनुष्ठानों में गाए जाने वाले लोकगीत धीरे-धीरे शास्त्रीय संगीत की संरचना और राग-रागिनियों में समाहित हुए, जिससे भारतीय संगीत अधिक भावनात्मक और जनसुलभ बन गया। भक्ति आंदोलन ने इस प्रभाव को और प्रबल किया, जब संत कवियों ने लोकभाषा और लोकधुनों के माध्यम से आध्यात्मिक संदेश जनमानस तक पहुँचाए। क्षेत्रीय विविधताओं ने संगीत को अनेक रंग प्रदान किए, जिससे वह बहुआयामी और व्यापक स्वरूप में विकसित हुआ। आधुनिक समय में भी लोकधुनों का प्रभाव फिल्मी संगीत और फ्यूज़न संगीत में दिखाई देता है। इस प्रकार, लोक साहित्य ने भारतीय संगीत को न केवल ऐतिहासिक और सांस्कृतिक गहराई दी, बल्कि उसे समाज की आत्मा से जोड़कर कालजयी बना दिया।

Keywords: लोक साहित्य, भारतीय संगीत, लोकगीत, सांस्कृतिक प्रभाव, भक्ति आंदोलन

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति की जड़ों में संगीत और साहित्य दोनों ही गहराई से जुड़े हुए हैं। भारतीय संगीत जहाँ अपनी समृद्ध परंपरा, राग-रागिनियों और भावप्रवण अभिव्यक्ति के कारण विश्वभर में प्रसिद्ध है, वहीं लोक साहित्य अपने सहज, स्वाभाविक और जनजीवन से जुड़े स्वरूप के कारण समाज की आत्मा को प्रतिबिंबित करता है। लोक साहित्य में निहित गीत, कहावतें, कथाएँ और लोककथाएँ न केवल जनता की भावनाओं और संवेदनाओं का दर्पण हैं, बल्कि उन्होंने भारतीय संगीत को भी गहरे स्तर पर प्रभावित किया है। लोकगीत, जो कभी ग्रामीण परिवेश में श्रम, उत्सव, विवाह, जन्म या ऋतु-परिवर्तन जैसे अवसरों पर गाए जाते थे, धीरे-धीरे शास्त्रीय संगीत की बुनियाद में समाहित हो गए। यही कारण है कि भारतीय संगीत की कई राग-रागिनियों में लोकधुनों की झलक दिखाई देती है। भक्ति आंदोलन ने इस प्रभाव को और अधिक सशक्त किया, जब संत कवियों और लोकगायकों ने सरल भाषा और लोकधुनों के माध्यम से आध्यात्मिक संदेश जन-जन तक पहुँचाया। इस प्रक्रिया में लोक साहित्य ने संगीत को लोक-भावनाओं से जोड़ते हुए उसे व्यापक सामाजिक और सांस्कृतिक धरातल प्रदान किया। विशेष रूप से भोजपुरी, ब्रज, अवधी, राजस्थानी, पंजाबी, मराठी, बंगाली, असमिया और तमिल जैसे विविध भाषाई अंचलों के लोकगीतों ने भारतीय संगीत को विविधता और बहुआयामिता प्रदान की। लोक साहित्य के प्रभाव से

भारतीय संगीत केवल दरबारी या शास्त्रीय परंपरा तक सीमित नहीं रहा, बल्कि जनमानस का संगीत बन गया, जो हर वर्ग, हर क्षेत्र और हर परिस्थिति में अपनी गूंज बिखेरता है। आधुनिक काल में भी लोकधुनों का प्रभाव फिल्मी संगीत और समकालीन फ्यूज़न संगीत में स्पष्ट देखा जा सकता है, जहाँ पारंपरिक लोकगीतों को आधुनिक वाद्ययंत्रों और तकनीक के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है। इस प्रकार, भारतीय संगीत पर लोक साहित्य का प्रभाव केवल ऐतिहासिक या सांस्कृतिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि यह भारतीय समाज की जीवंतता, उसकी विविधता और उसकी संवेदनाओं को संगीत के माध्यम से अभिव्यक्त करने वाली शक्ति भी है। लोक साहित्य ने संगीत को न केवल गहराई और आत्मीयता प्रदान की है, बल्कि उसे समाज की धड़कनों से जोड़कर उसे जीवंत और कालजयी भी बना दिया है।

शोध का उद्देश्य

इस शोध का मुख्य उद्देश्य भारतीय संगीत पर लोक साहित्य के प्रभाव का गहन अध्ययन करना है। भारतीय संगीत अपनी शास्त्रीय परंपराओं के लिए प्रसिद्ध है, किंतु इसकी जड़ें लोक साहित्य और लोकधुनों में गहराई से समाई हुई हैं। लोकगीत और लोककथाएँ जनमानस की भावनाओं, परंपराओं और जीवन शैली का सजीव चित्रण करती हैं, और इन्हीं से संगीत को सहजता, आत्मीयता और जनसुलभता मिली है। इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट करना है कि किस प्रकार लोक साहित्य ने भारतीय संगीत को न केवल विषयवस्तु और भाषा दी, बल्कि उसकी ध्वन्यात्मक संरचना, राग-रागिनियों और भावाभिव्यक्ति पर भी गहरा असर डाला। साथ ही यह शोध यह भी दर्शाएगा कि क्षेत्रीय विविधताओं और भक्ति आंदोलन के दौरान लोक साहित्य ने संगीत को सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों से जोड़ते हुए किस प्रकार भारतीय संगीत को एक व्यापक और कालजयी स्वरूप प्रदान किया।

भारतीय संगीत की परंपरा और विकास

भारतीय संगीत की परंपरा अत्यंत प्राचीन, समृद्ध और विविधताओं से भरी हुई है, जिसमें आध्यात्मिकता, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और सामाजिक जीवन का गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। भारतीय संगीत केवल कला का माध्यम नहीं है, बल्कि यह जीवन-दर्शन, साधना और समाज की आत्मा का प्रतिबिंब है। इसकी जड़ें वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय तक फैली हुई हैं और इसने समय-समय पर विभिन्न सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों को आत्मसात कर अपना एक व्यापक और कालजयी स्वरूप बनाया है। भारतीय संगीत की परंपरा को समझने के लिए हमें इसके विकासक्रम को तीन प्रमुख आधारों पर देखना आवश्यक है—वैदिक कालीन संगीत परंपरा, शास्त्रीय संगीत की आधारभूमि, और लोकसंगीत का उद्भव और स्वरूप।

- **वैदिक कालीन संगीत परंपरा**

भारतीय संगीत की नींव वैदिक काल में रखी गई थी, जब संगीत का संबंध प्रत्यक्ष रूप से धर्म और आध्यात्मिकता से था। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद में संगीत और ध्वनि की शक्ति का उल्लेख मिलता है, विशेषकर सामवेद को संगीत का मूल माना जाता है। सामगान, जिसमें वैदिक मंत्रों का गान विशेष छंद और स्वर के साथ किया जाता था, भारतीय संगीत का आद्यरूप था। इस काल में संगीत का

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

प्रयोग धार्मिक अनुष्ठानों, यज्ञों और मंत्रोच्चारण में किया जाता था, जिससे ध्वनि और स्वर को दिव्यता का प्रतीक माना गया। ध्वनि को ब्रह्म के रूप में स्वीकार किया गया और संगीत को साधना का माध्यम माना गया। यह काल संगीत को केवल मनोरंजन या कला के रूप में नहीं, बल्कि ईश्वर-प्राप्ति और आत्मशुद्धि का साधन मानता था। स्वर-सप्तक का आधार भी इसी काल में विकसित हुआ, जिसने आगे चलकर राग-रागिनी की परंपरा को जन्म दिया।

- **शास्त्रीय संगीत की आधारभूमि**

वैदिक परंपरा के बाद भारतीय संगीत ने धीरे-धीरे एक व्यवस्थित रूप धारण किया और शास्त्रीय संगीत की आधारभूमि तैयार हुई। भरतमुनि के *नाट्यशास्त्र* को भारतीय शास्त्रीय संगीत का पहला व्यवस्थित ग्रंथ माना जाता है, जिसमें स्वर, ताल, लय, राग, वाद्य और गान की तकनीकों का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसके पश्चात् मतंग मुनि के *बृहद्देशी* और शारंगदेव के *संगीत रत्नाकर* ने संगीत को और अधिक व्यवस्थित रूप प्रदान किया। शास्त्रीय संगीत मुख्यतः दो धाराओं में विभक्त हुआ—उत्तर भारत का हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत और दक्षिण भारत का कर्नाटिक शास्त्रीय संगीत। दोनों ही परंपराओं में राग, ताल और लय का महत्व अत्यधिक है, किंतु उनके प्रस्तुतीकरण और शैली में अंतर है। हिंदुस्तानी संगीत में ध्रुपद, खयाल, ठुमरी, टप्पा जैसी विधाएँ विकसित हुईं, जबकि कर्नाटिक संगीत में कृति, वरणम, आलापना और कीर्तन जैसी विधाएँ प्रमुख हुईं। शास्त्रीय संगीत ने संगीत को एक उच्च कोटि की साधना और विद्या के रूप में स्थापित किया, जिसका अभ्यास गुरु-शिष्य परंपरा के अंतर्गत होता था। इस परंपरा ने संगीत को केवल भावनात्मक ही नहीं, बल्कि बौद्धिक और आध्यात्मिक ऊँचाई भी प्रदान की।

- **लोकसंगीत का उद्भव और स्वरूप**

शास्त्रीय संगीत के समानांतर भारतीय संगीत का एक अन्य जीवंत आयाम लोकसंगीत के रूप में विकसित हुआ। लोकसंगीत की जड़ें भारतीय जनजीवन और सामाजिक-सांस्कृतिक परंपराओं में गहराई से निहित हैं। यह संगीत किसी ग्रंथ या शास्त्र में बंधा हुआ नहीं था, बल्कि जनता की भावनाओं, उनके श्रम, उनके उत्सवों और उनकी परंपराओं से उपजा था। लोकगीतों में प्रकृति, ऋतु, श्रम, विवाह, जन्म, धार्मिक अनुष्ठान और सामाजिक घटनाओं का सजीव चित्रण मिलता है। यह संगीत सरल, सहज और लयात्मक होता है, जिसे विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि यह स्वाभाविक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक परंपरा से संप्रेषित होता है। उत्तर भारत में लोकगीतों के रूप में बिरहा, कजरी, सोहर, आल्हा आदि प्रचलित हुए, तो दक्षिण भारत में ओवी, जोगुला, जनपद गीत आदि रूप देखने को मिले। पूर्वी भारत में बिहू गीत, भटियाली और बाउल गीत लोकजीवन को प्रतिबिंबित करते हैं, जबकि पश्चिम भारत में गरबा, माण्ड और ओवी गीत सांस्कृतिक परंपराओं का अंग है। लोकसंगीत की विशेषता उसकी सहजता और सामूहिकता है, जिसमें व्यक्तिगत अभिव्यक्ति से अधिक सामुदायिक अनुभव झलकता है। यह लोक के दुख-दर्द, उल्लास और जीवन संघर्ष का दर्पण है, और इसी कारण यह जनमानस में अत्यंत प्रिय है।

इस प्रकार भारतीय संगीत की परंपरा और विकास को देखते हुए स्पष्ट होता है कि यह केवल एक कला नहीं, बल्कि समाज और संस्कृति की आत्मा का जीवंत स्वरूप है। वैदिक काल से लेकर शास्त्रीय परंपरा

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

और लोकसंगीत तक, भारतीय संगीत ने निरंतर समाज की धड़कनों को स्वर और लय में पिरोया है। शास्त्रीय संगीत ने इसे उच्च कोटि की साधना और विद्या का रूप दिया, जबकि लोकसंगीत ने इसे जनजीवन से जोड़कर सरल और सहज बनाया। दोनों धाराएँ मिलकर भारतीय संगीत को एक ऐसी समग्रता प्रदान करती हैं, जो न केवल भारतीय संस्कृति की पहचान है, बल्कि विश्व सांस्कृतिक धरोहर में भी इसका अनूठा स्थान स्थापित करती है।

साहित्य समीक्षा

सिंह (2022) ने अपने शोध *"भारतीय लोकगीतों का सांस्कृतिक लोकाचार"* में यह स्पष्ट किया है कि लोकगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं हैं, बल्कि ये भारतीय समाज की सांस्कृतिक आत्मा और परंपराओं के संवाहक हैं। उन्होंने दिखाया कि विवाह, जन्म, श्रम और उत्सव जैसे अवसरों पर गाए जाने वाले गीत समाज की रीति-रिवाजों और सामूहिक भावनाओं का दर्पण हैं। यह दृष्टिकोण भारतीय लोकगीतों की सामाजिक जड़ों और उनकी स्थायी प्रासंगिकता को उजागर करता है।

सैयद (2024) का कार्य भारत के आदिवासी लोकगीतों पर केंद्रित है। वे यह दिखाते हैं कि आदिवासी समाजों में लोकगीत केवल सांस्कृतिक धरोहर ही नहीं बल्कि पहचान, परंपरा और सामाजिक एकजुटता का माध्यम भी हैं। आदिवासी लोकगीत प्रकृति, धार्मिक आस्था और सामुदायिक जीवन के गहरे संबंध को दर्शाते हैं। इस शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि मुख्यधारा भारतीय संगीत में भी आदिवासी लोकधुनों का योगदान महत्वपूर्ण है।

कुमार, चौहान और पारिख (2011) SIGCHI सम्मेलन (स्पेशल इंटरेस्ट ग्रुप ऑन कंप्यूटर–ह्यूमन इंटरैक्शन) विश्व स्तर पर मानव और कंप्यूटर के बीच अंतःक्रिया पर केंद्रित एक प्रमुख मंच है, जिसे एसोसिएशन फॉर कम्प्यूटिंग मशीनरी (ACM) द्वारा आयोजित किया जाता है। यह सम्मेलन इस बात पर विशेष ध्यान देता है कि तकनीक और डिजिटल माध्यमों के माध्यम से सांस्कृतिक, सामाजिक और कलात्मक अभिव्यक्तियाँ किस प्रकार रूपांतरित हो रही हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में, शोधकर्ताओं ने यह अध्ययन किया कि लोकसंगीत डिजिटल माध्यमों के ज़रिए कैसे संरक्षित और प्रसारित हो रहा है। उन्होंने SIGCHI सम्मेलन में यह रेखांकित किया कि डिजिटलीकरण ने लोकसंगीत को केवल स्थानीय या क्षेत्रीय दायरे तक सीमित नहीं रहने दिया, बल्कि उसे वैश्विक मंच पर पहचान दिलाई। इसी क्रम में फियोल (2017) का *"हिमालय में लोक संगीत का पुनर्निर्माण"* कार्य दर्शाता है कि कैसे मीडिया और सामाजिक गतिशीलता ने पारंपरिक लोकधुनों को नए मंच दिए। ये दोनों अध्ययन यह स्पष्ट करते हैं कि आधुनिक तकनीक और मीडिया लोकगीतों के पुनरुत्थान और वैश्विक मान्यता में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

आलम, दुबे, शुक्ला और कुमारी (2023) ने लोकगीतों को ग्रामीण भारत में जनसंचार का सशक्त माध्यम बताया। उनका अध्ययन दर्शाता है कि लोकगीतों के माध्यम से सामाजिक संदेश, जागरूकता और शिक्षा आसानी से आम जनता तक पहुँचाई जा सकती है। इसी प्रकार, कुमार और आलम (2023) ने यह शोध प्रस्तुत किया कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान लोकगीत और लोकमीडिया ने जनचेतना जगाने और

लोगों को संगठित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन शोधों से स्पष्ट है कि लोकगीत केवल सांस्कृतिक धरोहर नहीं बल्कि सामाजिक और राजनीतिक चेतना का माध्यम भी हैं।

ओझा (2020) ने अपने अध्ययन में यह विश्लेषण प्रस्तुत किया कि लोक साहित्य और स्थानीय भाषाओं का उदय भारतीय संस्कृति की आधारभूमि है। उनका निष्कर्ष यह था कि लोकभाषाओं में सृजित साहित्य ने भारतीय समाज को जड़ों से जोड़े रखा। वहीं, गायत्री (2024) ने एक तुलनात्मक दृष्टि से अरब की मौखिक कविता और लोककथाओं की जाँच की और यह स्पष्ट किया कि लोक साहित्य विश्व स्तर पर सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण प्रकार है। इन शोधों ने लोक साहित्य को केवल भारत तक सीमित न रखकर वैश्विक सांस्कृतिक विमर्श का हिस्सा बनाया।

भारतीय लोकगीत और लोक साहित्य बहुआयामी स्वरूप रखते हैं—ये संस्कृति और परंपरा के संवाहक हैं, आदिवासी और क्षेत्रीय पहचान को मज़बूत करते हैं, आधुनिक मीडिया और डिजिटलीकरण से नया जीवन पाते हैं, सामाजिक और राजनीतिक चेतना का माध्यम बनते हैं, और वैश्विक स्तर पर भी साहित्यिक विमर्श को समृद्ध करते हैं। इस साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संगीत और लोक साहित्य का संबंध केवल अतीत या परंपरा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह वर्तमान और भविष्य में भी उतना ही प्रासंगिक और जीवंत है।

लोक साहित्य और लोकगीत

भारतीय संस्कृति की आत्मा माने जाने वाले लोक साहित्य का सबसे जीवंत और सशक्त अंग लोकगीत हैं, जो जनजीवन की धड़कनों, भावनाओं और अनुभवों को संगीतबद्ध रूप में प्रस्तुत करते हैं। लोकगीत मात्र मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक चेतना, आस्थाओं और परंपराओं का अमूल्य दस्तावेज़ हैं। ये गीत न केवल समय-समय पर गाए जाते हैं, बल्कि जीवन के हर चरण—जन्म से लेकर मृत्यु तक, श्रम से लेकर उत्सव तक, और ऋतु से लेकर धार्मिक अनुष्ठानों तक—मनुष्य की संवेदनाओं के साथ चलते हैं। लोकगीतों की विविधता और उनके भावनात्मक-सांस्कृतिक महत्व को समझने के लिए तीन पहलुओं पर विचार करना आवश्यक है—लोकगीतों के प्रकार, लोकगीतों में भावनात्मक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति, तथा संगीत और लोकगीत का परस्पर संबंध।

- **लोकगीतों के प्रकार**

लोकगीतों का सबसे बड़ा गुण उनकी विविधता है, जो भारतीय समाज की बहुरंगी संरचना और जीवन के हर पहलू को प्रतिबिंबित करती है। लोकगीत न केवल मनोरंजन का साधन हैं, बल्कि जीवन के अवसरों, धार्मिक अनुष्ठानों, श्रम, उत्सव और सामाजिक संबंधों से गहराई से जुड़े हुए हैं। इन्हें हम पाँच प्रमुख श्रेणियों में बाँट सकते हैं–मौसमी लोकगीत, धार्मिक लोकगीत, सामाजिक लोकगीत, श्रमगीत, और संस्कार गीत.

1. मौसमी लोकगीत

मौसमी लोकगीत प्रकृति और ऋतु-चक्र से जुड़े होते हैं। इनमें वर्षा, वसंत, ग्रीष्म और शरद जैसी ऋतुओं की विशेषताओं और उनसे जुड़े उत्सवों का वर्णन मिलता है। उदाहरण के लिए, सावन-भादो में गाए जाने

वाले कजरी गीत, फागुन में गाए जाने वाले फाग और असम के बिहू गीत। ये गीत केवल ऋतु परिवर्तन का उत्सव ही नहीं हैं, बल्कि प्रकृति और मनुष्य के गहरे संबंध को भी व्यक्त करते हैं।

2. धार्मिक लोकगीत

धार्मिक लोकगीत विशेष पर्वों, मेलों और अनुष्ठानों के अवसर पर गाए जाते हैं। इनमें देवी-देवताओं की स्तुति, धार्मिक कथाएँ और भक्ति-भावना का उत्कृष्ट प्रदर्शन होता है। जैसे भजन, कीर्तन, गरबा, आल्हा और देवी-देवताओं की आराधना से जुड़े गीत। इन गीतों में भक्ति, श्रद्धा और आध्यात्मिकता का गहन भाव निहित होता है, जो समाज को धार्मिकता और आध्यात्मिक एकता से जोड़ता है।

3. सामाजिक लोकगीत

सामाजिक लोकगीत मनुष्य के जीवन-चक्र की घटनाओं से सीधे जुड़े होते हैं। जन्मोत्सव पर गाए जाने वाले सोहर गीत मातृत्व और जीवन की खुशी को व्यक्त करते हैं। विवाह में गाए जाने वाले मंगल गीत और विदाई गीत पारिवारिक और सामाजिक संबंधों की गहराई को दर्शाते हैं। वहीं मृत्यु के अवसर पर गाए जाने वाले विरह गीत जीवन की अनित्यता और शोक को व्यक्त करते हैं। इन गीतों में जीवन के सुख-दुख का सजीव चित्रण मिलता है।

4. श्रमगीत

श्रमगीत श्रमिक वर्ग की थकान मिटाने और काम को सामूहिक रूप से करने की ऊर्जा प्रदान करने के लिए गाए जाते हैं। इन गीतों का लयात्मक स्वरूप श्रम को आसान बना देता है। उदाहरणस्वरूप, नाविकों के बीच गाए जाने वाले भटियाली गीत, किसानों के हल गीत और चरवाहों के चरवाहा गीत। इन गीतों में सामूहिकता, सहयोग और जीवन के संघर्ष से जूझने की भावना झलकती है।

5. विवाहगीत

विवाहगीत लोकगीतों का सबसे व्यापक और लोकप्रिय रूप हैं। विवाह संस्कार के प्रत्येक चरण पर गाए जाने वाले गीतों में परंपरा, हास्य और संवेदनाएँ सम्मिलित रहती हैं। मांगलिक गीत विवाह की पवित्रता को दर्शाते हैं, विदाई गीत परिवार और रिश्तों के बिछोह की पीड़ा को व्यक्त करते हैं, जबकि गाली-गीत हास्य और व्यंग्य के माध्यम से वातावरण को हल्का और आनंदमय बनाते हैं।

- **लोकगीतों में भावनात्मक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति**

लोकगीत केवल गीत नहीं हैं, बल्कि भावनाओं के सहज और स्वाभाविक प्रवाह का प्रतीक हैं। इनमें प्रेम, विरह, आनंद, उत्सव, भक्ति, श्रम, संघर्ष, आशा और निराशा जैसी सभी मानवीय भावनाओं का सहज चित्रण मिलता है। जब कोई माँ अपने शिशु को लोरी सुनाती है, तो उसमें मातृत्व की ममता झलकती है; जब कोई प्रेमिका विरह में गीत गाती है, तो उसमें उसकी पीड़ा और तड़प अभिव्यक्त होती है; जब किसान खेतों में हल जोतते समय गीत गाते हैं, तो उसमें श्रम का उल्लास और सामूहिकता का भाव प्रकट होता है। सांस्कृतिक दृष्टि से भी लोकगीतों का महत्व अद्वितीय है। ये समाज की परंपराओं, रीति-रिवाजों और सांस्कृतिक पहचान को जीवंत बनाए रखते हैं। उत्तर भारत में ब्रज के रसिया और फाग गीत कृष्ण भक्ति और रंगोत्सव का प्रतीक हैं, तो राजस्थान के मांड और पधारो म्हारे देस गीत मरुस्थल की

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049-4176

सांस्कृतिक विशिष्टता को उजागर करते हैं। पूर्वी भारत में बाउल और भटियाली गीत आध्यात्मिकता और प्रकृति से जुड़ाव का सशक्त उदाहरण हैं, तो पश्चिम भारत के गरबा और दांडीया गीत सामुदायिक एकता और धार्मिक आस्था का उत्सव हैं। दक्षिण भारत के जोगुला और जनपद गीत क्षेत्रीय संस्कृति और देवी-देवताओं की लोककथाओं से जुड़ाव को दर्शाते हैं। इस प्रकार, लोकगीत न केवल भावनाओं का प्रकटीकरण करते हैं, बल्कि सांस्कृतिक धरोहर को भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी जीवित रखते हैं।

- **संगीत और लोकगीत का परस्पर संबंध**

लोकगीत और संगीत का रिश्ता अभिन्न है। लोकगीत स्वयं संगीत का वह रूप हैं, जो किसी औपचारिक प्रशिक्षण या जटिलता से परे, स्वाभाविक लय, ताल और धुन में गाए जाते हैं। ये गीत साधारण वाद्ययंत्रों जैसे ढोलक, मंजीरा, सारंगी, बांसुरी, इकतारा या यहां तक कि हाथों की ताली और पैरों की थाप के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं। लोकगीतों की धुनें ही आगे चलकर शास्त्रीय संगीत की राग-रागिनियों में समाहित हुईं। उदाहरणस्वरूप, कई रागों की जड़ें लोकधुनों में मिलती हैं, जिन्हें संगीतज्ञों ने शास्त्रीय रूप प्रदान किया। भक्ति आंदोलन के दौरान कबीर, तुलसीदास, मीरा और सूरदास जैसे संत कवियों ने लोकधुनों को अपनाकर अपने भजनों और पदों को जनमानस तक पहुँचाया, जिससे संगीत व्यापक सामाजिक और आध्यात्मिक संदेश का माध्यम बना। आधुनिक समय में भी लोकगीतों का प्रभाव भारतीय फिल्म संगीत और फ्यूज़न संगीत पर स्पष्ट देखा जा सकता है, जहाँ पारंपरिक धुनों को नए वाद्ययंत्रों और आधुनिक संगीत तकनीकों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार, लोकगीत और संगीत का परस्पर संबंध भारतीय संस्कृति को निरंतर जीवंत बनाए रखने का आधार है।

लोकगीत भारतीय लोक साहित्य का हृदय हैं, जिनमें जीवन की सरलता, भावनाओं की गहराई और संस्कृति की जीवंतता समाहित है। इनकी विविधता, भावनात्मक गहनता और संगीत से अटूट जुड़ाव भारतीय समाज की सामूहिक आत्मा को प्रकट करता है। लोकगीतों ने न केवल संगीत को लोकजीवन से जोड़ा, बल्कि उसे सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक चेतना और भावनात्मक गहराई भी प्रदान की। यही कारण है कि भारतीय संगीत की आत्मा में लोकगीतों की धड़कन आज भी गूंजती है और आगे भी गूंजती रहेगी।

भारतीय संगीत पर लोक साहित्य का प्रभाव

भारतीय संगीत का विकास केवल शास्त्रीय परंपरा या दरबारी संगीत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसकी आत्मा लोक साहित्य और लोकगीतों से गहराई से जुड़ी हुई है। लोक साहित्य ने संगीत को विषयवस्तु, ध्वन्यात्मकता और भावनात्मकता प्रदान करते हुए उसे न केवल जनता का संगीत बनाया बल्कि उसे सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आधार भी दिया। यदि भारतीय संगीत की आत्मा को समझना हो तो यह देखना होगा कि किस प्रकार लोकधुनों, लोकगीतों और लोककथाओं ने शास्त्रीय संगीत को प्रभावित किया, राग-रागिनियों में अपनी छाप छोड़ी, भक्ति आंदोलन को नया आयाम दिया और नाट्य, कीर्तन तथा भजन पर अमिट छाप छोड़ी। इस प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए चार प्रमुख पहलुओं पर विचार करना आवश्यक है—लोकधुनों का शास्त्रीय संगीत में समावेश, राग-रागिनियों में लोकगीतों की छाप,

भक्ति आंदोलन में लोक साहित्य और संगीत का योगदान, और नाट्य, कीर्तन और भजन पर लोक साहित्य का प्रभाव।

- **लोकधुनों का शास्त्रीय संगीत में समावेश**

भारतीय शास्त्रीय संगीत की कई राग-रागिनियों और उसकी धुनों की जड़ें लोकधुनों में पाई जाती हैं। लोकगीतों की सहज लय और स्वाभाविक ध्वनियाँ समय के साथ शास्त्रीय ढाँचे में समाहित होती चली गईं। उदाहरण के लिए, उत्तर भारत के कजरी, बिरहा, होली और झूला गीतों की धुनों को संगीतज्ञों ने व्यवस्थित करके रागों का रूप दिया। यह प्रक्रिया केवल धुनों तक सीमित नहीं रही, बल्कि लोकगीतों के भाव और उनकी प्रस्तुति शैली ने भी शास्त्रीय संगीत की संरचना को अधिक जीवंत और प्रभावी बनाया। दरअसल, लोकधुनों ने शास्त्रीय संगीत को एक स्थिर और दरबारी रूप से निकालकर उसे जीवन की वास्तविकताओं और जनता की संवेदनाओं से जोड़ा।

- **भक्ति आंदोलन में लोक साहित्य और संगीत का योगदान**

भारतीय संगीत पर लोक साहित्य का सबसे गहरा प्रभाव भक्ति आंदोलन के दौरान देखा गया। इस काल में कबीर, तुलसीदास, सूरदास, मीरा, नामदेव, ज्ञानेश्वर और अन्य संत कवियों ने लोकभाषा और लोकधुनों का सहारा लेकर अपने आध्यात्मिक संदेशों को जनता तक पहुँचाया। उनके भजन, पद और कीर्तन न केवल लोकधुनों में गाए जाते थे, बल्कि उनकी भाषा भी जनता की सहज बोलचाल से जुड़ी हुई थी। कबीर के साखी और भजन, तुलसीदास के रामचरितमानस के चौपाई और दोहे, सूरदास के पद और मीरा के भजन आज भी लोकधुनों के सहारे गाए जाते हैं। भक्ति आंदोलन ने संगीत को केवल दरबारी सीमाओं से निकालकर समाज के हर वर्ग तक पहुँचाया और उसे लोकजीवन की भावनाओं से जोड़ा। लोक साहित्य के कारण भक्ति संगीत इतना लोकप्रिय हुआ कि आज भी मंदिरों, गाँवों और मेलों में उसकी गूँज सुनाई देती है।

- **नाट्य, कीर्तन और भजन पर लोक साहित्य का प्रभाव**

भारतीय नाट्य परंपरा, कीर्तन और भजन गान पर भी लोक साहित्य का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। लोकनाट्य जैसे नौटंकी, तमाशा, यक्षगान, भवाई और कथकली में लोकगीत और लोककथाओं का प्रयोग संगीत के साथ मिलाकर किया जाता था। ये नाट्य विधाएँ केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि सामाजिक शिक्षा और धार्मिक आस्था का साधन भी थीं। कीर्तन, जो विशेषकर महाराष्ट्र और कर्नाटक में लोकप्रिय हुआ, लोकधुनों पर आधारित होकर भक्ति और सामूहिकता का अनुभव कराता था। इसी प्रकार भजन, चाहे वह तुलसीदास, सूरदास, कबीर या मीरा के हों, अपनी धुनों और प्रस्तुति शैली में लोक साहित्य का स्पष्ट प्रभाव दिखाते हैं। इन गीतों ने संगीत को समाज के हर वर्ग के लिए सुलभ बनाया और सामूहिक सांस्कृतिक चेतना को मजबूत किया।

इस प्रकार भारतीय संगीत पर लोक साहित्य का प्रभाव गहन, व्यापक और बहुआयामी रहा है। लोकधुनों ने शास्त्रीय संगीत की कठोर संरचना को सहजता और जीवन्तता दी, राग-रागिनियों ने लोकगीतों की धुनों को आत्मसात कर भावनात्मक और सांस्कृतिक गहराई प्राप्त की, भक्ति आंदोलन ने संगीत को जनमानस

से जोड़कर उसे आध्यात्मिक और सामाजिक आंदोलन का रूप दिया, और नाट्य, कीर्तन तथा भजन ने संगीत को लोकजीवन का अभिन्न हिस्सा बना दिया। स्पष्ट है कि लोक साहित्य और संगीत का संबंध भारतीय संस्कृति की आत्मा है, जिसने भारतीय संगीत को केवल कला न बनाकर समाज और संस्कृति का जीवंत दर्पण बनाया है। यही कारण है कि भारतीय संगीत में आज भी लोक साहित्य की धड़कन गूँजती है और भविष्य में भी यह संबंध संगीत को निरंतर जीवंत और प्रासंगिक बनाए रखेगा।

विभिन्न क्षेत्रों का तुलनात्मक अध्ययन

भारतीय संगीत और लोक साहित्य की समृद्धि उसकी क्षेत्रीय विविधता में निहित है, जो देश के विभिन्न भौगोलिक, भाषाई और सांस्कृतिक अंचलों की विशेषताओं को अभिव्यक्त करती है। उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक हर क्षेत्र ने अपनी जीवन शैली, धार्मिक परंपराओं, सामाजिक संरचनाओं और प्रकृति के साथ संबंधों के आधार पर विशिष्ट लोकगीत और लोकसंगीत की परंपरा विकसित की है। ये सभी क्षेत्रीय स्वरूप मिलकर भारतीय संगीत और लोक साहित्य की उस व्यापकता और बहुरंगी छवि को प्रस्तुत करते हैं, जो न केवल भारतीय समाज की विविधता का प्रतीक है, बल्कि उसकी एकता का आधार भी है। इस तुलनात्मक अध्ययन को चार प्रमुख आयामों में समझा जा सकता है—उत्तर भारत की लोक परंपराएँ, दक्षिण भारत के कर्नाटक लोकगीत और संगीत, पूर्वी भारत का लोकसंगीत, और पश्चिम भारत की लोकधुनें।

- **उत्तर भारत**

उत्तर भारत के लोकगीत और लोकसंगीत जनजीवन के प्रत्येक पहलू को स्पर्श करते हैं। भोजपुरी लोकगीतों में श्रम और उत्सव का अद्वितीय संगम मिलता है। यहाँ के बिरहा, कजरी, सोहर और चैता गीत किसानों, नाविकों और स्त्रियों की भावनाओं को प्रकट करते हैं। अवधी के लोकगीत विशेष रूप से धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं से जुड़े हुए हैं, जिनमें रामकथा, विवाह संस्कार और ग्रामीण जीवन की झलक मिलती है। ब्रज के लोकगीतों में कृष्णभक्ति की गहरी छाप है—फाग, रसिया और झूला गीतों में प्रेम, भक्ति और रासलीला का भाव स्पष्ट दिखता है। वहीं, राजस्थानी लोकगीत मरुस्थल की कठोरता और लोकजीवन की उत्सवधर्मिता को प्रकट करते हैं। पधारो म्हारे देस, गवराई, मांड और पनिहारी गीत राजस्थान की सांस्कृतिक विशिष्टता के उदाहरण हैं। इन सभी लोक परंपराओं की विशेषता यह है कि इनमें समाज के हर वर्ग की भावनाएँ और क्षेत्रीय परंपराएँ गहराई से जुड़ी हुई हैं, जो भारतीय संगीत को समृद्ध करती हैं।

- **दक्षिण भारत**

दक्षिण भारत का लोकसंगीत द्रविड़ संस्कृति की गहराई और धार्मिक चेतना से गहरे रूप में प्रभावित है। तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक और केरल की लोकधुनें कृषि, मंदिर परंपरा और धार्मिक अनुष्ठानों से गहराई से जुड़ी हुई हैं। तमिलनाडु के *ओप्पारी* और *कावड़ी* गीत सामाजिक और धार्मिक अवसरों पर गाए जाते हैं। आंध्रप्रदेश और तेलंगाना के *जनपद गीत* किसानों और ग्रामीण समाज की जीवन शैली को दर्शाते हैं। कर्नाटक की *यक्षगान* परंपरा न केवल लोकसंगीत बल्कि नाट्य और नृत्य का

भी अद्वितीय संगम है, जिसमें कथाएँ और पौराणिक आख्यान लोकधुनों पर प्रस्तुत किए जाते हैं। केरल में *सोपरन संगीतम्* और *ओणम गीत* लोकजीवन और पर्व-उत्सवों की सांस्कृतिक झलक प्रस्तुत करते हैं। दक्षिण भारत की इन परंपराओं ने कर्नाटिक शास्त्रीय संगीत को भी प्रभावित किया और उसकी रचनाओं में लोकधुनों की स्पष्ट गूँज सुनाई देती है।

- **पूर्वी भारत**

पूर्वी भारत का लोकसंगीत अपनी भावनात्मक गहराई और प्रकृति से गहरे संबंध के लिए प्रसिद्ध है। असम के *बिहू गीत* जीवन के उल्लास, ऋतु परिवर्तन और कृषि चक्र का उत्सव हैं। ये गीत सामूहिक नृत्य और वादन के साथ गाए जाते हैं और असम की पहचान बने हुए हैं। बंगाल के *बाउल गीत* आध्यात्मिकता और मानवतावाद की गहरी अभिव्यक्ति हैं, जिनमें प्रेम और भक्ति का अद्वितीय संगम मिलता है। इसके अतिरिक्त *भटियाली गीत* नाविकों द्वारा गाए जाने वाले गीत हैं, जो गंगा और ब्रह्मपुत्र की लहरों के साथ बहते हुए आत्मा को छू जाते हैं। ओड़िशा के लोकगीतों में *जनन गीत, कंधा गीत* और *झूमर* प्रमुख हैं, जो कृषक जीवन, श्रम और धार्मिक परंपराओं से जुड़े हुए हैं। इन सभी लोकसंगीत रूपों में प्रकृति और समाज का गहरा तालमेल मिलता है, जो पूर्वी भारत को एक विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान प्रदान करता है।

- **पश्चिम भारत**

पश्चिम भारत का लोकसंगीत अपनी धार्मिक और सामुदायिक अभिव्यक्ति के लिए जाना जाता है। गुजरात के *गरबा* और *डांडिया* गीत नवरात्रि के अवसर पर गाए और नाचे जाते हैं, जिनमें देवी-उपासना के साथ सामूहिक आनंद की अनुभूति होती है। *लोक-भजन* और *भक्ति गीत* भी यहाँ अत्यंत लोकप्रिय हैं, जो समाज को धार्मिक आस्था से जोड़ते हैं। महाराष्ट्र के *ओवी गीत* श्रम और घरेलू जीवन से जुड़े हुए हैं, जिन्हें महिलाएँ काम करते समय गाती हैं। *लावणी गीत* अपने लयबद्ध और नाटकीय स्वरूप के कारण लोकनाट्य *तमाशा* का अभिन्न अंग हैं। इसके अलावा, *गोंधल* और *कीर्तन* जैसी परंपराएँ धार्मिक अनुष्ठानों और सामूहिक भक्ति को स्वर देती हैं। पश्चिम भारत की इन लोकधुनों ने संगीत को न केवल क्षेत्रीय विशिष्टता प्रदान की, बल्कि उसे उत्सवधर्मी और सामूहिकता से भी समृद्ध किया।

इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों की लोकसंगीत परंपराएँ अपनी-अपनी विशेषताओं के साथ भारतीय संगीत को व्यापक और बहुआयामी स्वरूप प्रदान करती हैं। उत्तर भारत के लोकगीत भक्ति, श्रम और उत्सव के जीवंत चित्रण हैं; दक्षिण भारत की परंपराएँ धर्म और नाट्य-संस्कृति से जुड़ी हुई हैं; पूर्वी भारत का लोकसंगीत भावनात्मक और प्रकृति-संपृक्त है; और पश्चिम भारत का संगीत सामुदायिकता और धार्मिक आस्था का प्रतीक है। इन विविधताओं के बावजूद सभी लोकगीतों में जीवन की सहजता, भावनाओं की गहराई और सामूहिक चेतना की झलक मिलती है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में लोक साहित्य और संगीत

भारतीय संगीत परंपरा ने सदियों तक अपनी जड़ों से जुड़े रहते हुए समाज और संस्कृति का प्रतिबिंब प्रस्तुत किया है, किंतु आधुनिक युग में लोक साहित्य और लोकसंगीत की भूमिका और भी व्यापक और बहुआयामी हो गई है। आज जब तकनीक, संचार माध्यम और वैश्वीकरण ने सांस्कृतिक स्वरूप को

प्रभावित किया है, तब लोकधुनों और लोकगीतों ने नए स्वरूपों में प्रकट होकर न केवल अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी है बल्कि संगीत जगत को नई ऊर्जा और दिशा भी दी है। लोकसाहित्य और संगीत का यह आधुनिक परिप्रेक्ष्य मुख्यतः तीन आधारों पर स्पष्ट होता है—लोकधुनों का फिल्म संगीत पर प्रभाव, आधुनिक लोक-फ्यूज़न और पॉपुलर म्यूज़िक, तथा सांस्कृतिक पहचान और लोकसाहित्य-संगीत का पुनरुत्थान।

- **लोकधुनों का फिल्म संगीत पर प्रभाव**

भारतीय फिल्म संगीत ने लोकधुनों को नए मंच पर स्थापित किया और उन्हें वैश्विक स्तर पर लोकप्रिय बनाया। हिंदी सिनेमा के स्वर्णयुग से ही फिल्म संगीतकारों ने विभिन्न क्षेत्रों की लोकधुनों को अपनाकर उन्हें नए रूप में प्रस्तुत किया। उदाहरणस्वरूप, शास्त्रीय संगीत पर आधारित कई गीतों की धुनें वास्तव में लोकगीतों से प्रेरित रही हैं। बांग्ला भटियाली, भोजपुरी कजरी, पंजाबी बोलियों, गुजराती गरबा और राजस्थानी मांड की धुनों को फिल्मों ने अपनाकर जनसामान्य तक पहुँचाया। इससे न केवल फिल्मी संगीत को क्षेत्रीय रंग मिला बल्कि लोकसंगीत को भी राष्ट्रीय पहचान प्राप्त हुई। फिल्म संगीत में लोकधुनों का उपयोग गीतों को सहज, मधुर और भावनात्मक बनाने में सहायक रहा। आधुनिक फिल्मों में भी लोकधुनें रीमिक्स और पुनः संयोजन के माध्यम से लोकप्रिय हो रही हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि लोकसंगीत आज भी भारतीय फिल्म उद्योग की आत्मा है।

- **आधुनिक लोक-फ्यूज़न और पॉपुलर म्यूज़िक**

समकालीन दौर में संगीत की नई शैलियों के बीच लोकसंगीत ने खुद को फ्यूज़न और पॉपुलर म्यूज़िक के रूप में पुनः स्थापित किया है। आधुनिक बैंड, गायक और संगीतकार लोकधुनों को आधुनिक वाद्ययंत्रों और पश्चिमी संगीत शैलियों के साथ जोड़कर नया स्वरूप दे रहे हैं। जैसे *इंडियन ओशन, कैलाश खेर* या *रघु दीक्षित* जैसे कलाकारों ने लोकसंगीत को आधुनिक रंग में प्रस्तुत कर नई पीढ़ी तक पहुँचाया। फ्यूज़न संगीत ने जहाँ भारतीय लोकधुनों को अंतरराष्ट्रीय मंच पर मान्यता दिलाई, वहीं पॉपुलर म्यूज़िक ने इन्हें युवाओं की पसंद का हिस्सा बना दिया। यूट्यूब, स्पॉटिफाई और अन्य डिजिटल मंचों ने लोक-फ्यूज़न संगीत को वैश्विक स्तर पर प्रसारित करने का अवसर दिया है। इस प्रकार, लोकसंगीत ने समय और परिवेश के अनुसार स्वयं को ढालकर आधुनिक संगीत जगत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखी है।

- **सांस्कृतिक पहचान और लोकसाहित्य-संगीत का पुनरुत्थान**

आधुनिक युग में लोक साहित्य और लोकसंगीत का महत्व केवल मनोरंजन या कलात्मक प्रयोग तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक चेतना के पुनरुत्थान का माध्यम भी बना है। वैश्वीकरण और पॉपुलर कल्चर के प्रभाव से जब स्थानीय परंपराएँ और भाषाएँ संकट में पड़ीं, तब लोकसंगीत ने अपनी जड़ों से जुड़े रहकर समाज को अपनी संस्कृति और परंपरा की याद दिलाई। विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में लोक महोत्सव, ग्रामीण नाट्य-गीत प्रतियोगिताएँ और सांस्कृतिक मेलों का आयोजन इस पुनरुत्थान का प्रतीक है। इसके साथ ही विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों और सांस्कृतिक संगठनों ने लोकगीतों और लोककथाओं के संरक्षण और प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज लोकसंगीत न

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4
ISSN No: 3049-4176

केवल गाँवों में बल्कि शहरी मंचों, रेडियो, टीवी और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म्स पर भी अपनी गूंज बिखेर रहा है। इससे यह सिद्ध होता है कि लोकसाहित्य और संगीत आधुनिक समय में सांस्कृतिक आत्मविश्वास और पहचान का सशक्त साधन बन गए हैं।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में लोक साहित्य और संगीत ने अपनी पारंपरिक आत्मा को बनाए रखते हुए नए आयामों को आत्मसात किया है। फिल्म संगीत में इसका प्रभाव लोकप्रियता और सहजता लाया, लोक-फ्यूज़न ने इसे वैश्विक पहचान दी और सांस्कृतिक पुनरुत्थान ने इसे सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक अस्मिता का प्रतीक बनाया। लोकसंगीत और साहित्य की यह जीवंतता इस बात का प्रमाण है कि यह परंपरा समय की कसौटी पर खरा उतरते हुए भविष्य में भी भारतीय समाज और संस्कृति को नई दिशा प्रदान करती रहेगी।

निष्कर्ष

भारतीय संगीत पर लोक साहित्य का प्रभाव व्यापक, गहन और बहुआयामी है। लोक साहित्य, जो जनता की भावनाओं, जीवन संघर्षों, आस्थाओं और सांस्कृतिक परंपराओं का सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है, ने भारतीय संगीत को उसकी जड़ों से जोड़े रखा और उसे केवल एक कला या मनोरंजन का साधन न बनाकर समाज की आत्मा और संस्कृति का जीवंत दर्पण बना दिया। वैदिक कालीन सामगान से लेकर शास्त्रीय संगीत की परिष्कृत राग-रागिनियों तक और आधुनिक फ्यूज़न संगीत तक, लोक साहित्य का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। लोकधुनों ने शास्त्रीय संगीत को सरलता और जीवंतता प्रदान की, राग-रागिनियों ने लोकगीतों की मधुरता और भावनाओं को आत्मसात किया, भक्ति आंदोलन ने लोकभाषा और लोकधुनों के सहारे संगीत को जनमानस तक पहुँचाया, और नाट्य, कीर्तन व भजन ने इसे सामूहिक चेतना का माध्यम बनाया। क्षेत्रीय दृष्टि से देखें तो उत्तर भारत के भोजपुरी, अवधी और ब्रज गीतों ने प्रेम, भक्ति और श्रम की झलक दी; दक्षिण भारत के लोकगीतों ने धार्मिकता और नाट्य संस्कृति को स्वर दिया; पूर्वी भारत के बिहू, बाउल और भटियाली गीतों ने प्रकृति और आध्यात्मिकता का संगम प्रस्तुत किया; जबकि पश्चिम भारत के गरबा, ओवी और लावणी गीतों ने सामुदायिकता और उत्सवधर्मिता को अभिव्यक्त किया। आधुनिक काल में भी लोकधुनों ने फिल्म संगीत को मधुरता और लोकप्रियता प्रदान की, जबकि फ्यूज़न और पॉपुलर म्यूज़िक ने इन्हें नई पीढ़ी और वैश्विक मंच तक पहुँचाया। साथ ही, सांस्कृतिक पुनरुत्थान के प्रयासों ने लोक साहित्य और संगीत को केवल अतीत की धरोहर न मानकर वर्तमान की पहचान और भविष्य की दिशा बना दिया। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय संगीत की आत्मा लोक साहित्य में धड़कती है; यही साहित्य उसे जनजीवन से जोड़ता है, उसे भावनाओं से सराबोर करता है और उसे कालजयी स्वरूप प्रदान करता है।

संदर्भ

1. सिंह, जी. एच. (2022). भारतीय लोकगीतों का सांस्कृतिक लोकाचार। नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एंड म्यूजिक, 10(2)।
2. सैयद, एस. (2024). भारत के आदिवासी लोकगीत-महत्व और प्रभाव।

3. कुमार, एन., चौहान, जी., और पारिख, टी. (2011, मई)। भारत में लोक संगीत डिजिटल हो रहा है। कंप्यूटिंग सिस्टम में मानव कारकों पर SIGCHI सम्मेलन की कार्यवाही में (पृष्ठ 1423-1432)।
4. फियोल, एस. (2017). हिमालय में लोक संगीत का पुनर्निर्माण: भारतीय संगीत, मीडिया और सामाजिक गतिशीलता। इलिनोइस विश्वविद्यालय प्रेस।
5. आलम, बी., दुबे, पी. के., शुक्ला, ए. के., और कुमारी, जे. (2023)। ग्रामीण भारत में जनसंचार के माध्यम के रूप में लोकगीतों की भूमिका को समझना। जर्नल ऑफ सर्वे इन फिशरीज साइंसेज, 10(1), 3909-3915।
6. ओझा, पी. (2020)। भारत में लोक साहित्य और स्थानीय भाषाओं का उदय-निष्कर्ष और विश्लेषण। SSRN 3670562 पर उपलब्ध है।
7. कुमार, ए., और आलम, बी. (2023)। भारतीय मुक्ति संग्राम के दौरान लोकप्रिय संस्कृति के रूप में लोक मीडिया के कार्य को समझना। इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च (IJFMR), 5(5), 1-12।
8. गायत्री, एस. (2024)। साहित्य के एक महत्वपूर्ण प्रकार के रूप में लोक साहित्य: अरब में मौखिक कविता और लोक कथाओं की एक जाँच। पाकिस्तान जर्नल ऑफ लाइफ एंड सोशल साइंसेज, 22(2)।
9. तोशा, एम. (2023)। व्यक्तित्व के माध्यम से बोध: बिहार, भारत से बच्चों के लोकगीतों का एक अध्ययन। आईएएफओआर जर्नल ऑफ लिटरेचर एंड लाइब्रेरियनशिप, 12(1)।
10. रॉय, पी. (2021)। बंगाल का लोक संगीत और रवींद्रनाथ के गीत: प्रभाव और रहस्योद्घाटन। रोमानियन जर्नल ऑफ इंडियन स्टडीज, 1(1), 105-110।
11. रॉय, एस., और घोष, टी. (2019)। लोकगीतों पर ताल संगत का प्रभाव, अर्ध-शास्त्रीय संगीत के रूप में इसके विकास में। संगीत गैलेक्सी, 8(1)।
12. चटर्जी, आर. (2016)। लोकगीतों की पटकथा: बंगाल में इतिहास, लोककथाएँ और स्थान की कल्पना। मानव विज्ञान की वार्षिक समीक्षा, 45(1), 377-394।
13. घोष, ए., ढेरे, ए., और अली, एस. ए. (2024)। भारत में लोकगीतों का पुनर्निर्माण: सांस्कृतिक विनियोग, पारंपरिक अभिव्यक्तियाँ और कॉपीराइट दुविधा। जर्नल ऑफ इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स (जेआईपीआर), 29(4), 314-324।
14. कांबले, वी. सी., और रानसुरे, पी. (2008)। महाराष्ट्र की लोक और लोक-कथा संस्कृति। डेक्कन कॉलेज रिसर्च इंस्टीट्यूट का बुलेटिन, 68, 191-205।
15. जैन, पी. सी. (2007)। लोक साहित्य और सांस्कृतिक एकीकरण। भारतीय जनजातियों की सांस्कृतिक विरासत, 266।